શ્રી સ્વામિનારાયણો વિજયતેતરામ્

શિક્ષાપત્રી

हिन्दी

www.neelkanthvarni.com

॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतराम् ॥

www.bhujmandir.org

પ્રસિધ્ધ કર્તા :-
સ.ગુ. મહંત પુરાણી
સ્વામી હરિસ્વરૂપદાસજી
શ્રી સ્વામિનારાયણ
મંદિર ભુજ કચ્છ

Date :- 1-1-2006
संवत् २०६२

-: કંપોઝ સેટીંગ :-
પી.પી.સ્વામી
શ્રીસ્વામિનારાયણ
મંદિર ભુજ - કચ્છ.

शिक्षापत्री

SHIKSHAPATRI

वामे यस्य स्थिता राधा श्रीश्च यस्यास्ति वक्षसि ।
वृन्दावनविहारं तं श्रीकृष्णं हृदि चिन्तये ।।१।।

भगवान श्री स्वामिनारायण अपने प्रत्येक सत्संगी को नियमपूर्वक ज्ञान देने के लिए शिक्षापत्री लिखते हैं तत्पूर्व आत्मस्वरूप का ध्यानरूप मंगलाचरण करते हैं ।

जिनके वाम भाग में राधाजी स्थित हैं और वक्ष:स्थलमें (हृदयमें) लक्ष्मीजी रही हैं ऐसे वृन्दावनमें विहार करनेवाले श्रीकृष्ण भगवानका हम अपने हृदयमें चिन्त्वन करते हैं । (१)

लिखामि सहजानंदस्वामी सर्वान्निजाश्रितान् ।
नानादेशस्थितान् शिक्षापत्रीं वृत्तालयस्थित: ।।२।।

वृतालय गांवमें रहते हुएम श्रीसहजानंद-स्वामी विभिन्न देशोमें रहने वाले हमारे आश्रित सब सत्संगीओके लिए शिक्षापत्री लिखते हैं । (२)

भ्रात्रो रामप्रतापेच्छारामयोर्धर्मजन्मनो: ।
यावयोध्याप्रसादाख्यरघुवीराभिधौ सुतौ ।।३।।

श्री धर्मदेवसे जिनका जन्म हुआ है ऐसे हमारे भाई रामप्रतापजी तथा इच्छारामजी उनके पुत्र अयोध्याप्रसाद तथा रघुवीर जिन्हें हमने अपने दत्तक पुत्र करके सब सत्संगि लोगोके लिए आचार्यपद पर स्थापित किये हैं (३)

मुकुन्दानन्दमुख्याश्च नैष्ठिका ब्रह्मचारिण: ।
गृहस्थाश्च मयारामभट्टाद्या ये मदाश्रया: ।।४।।

हमारे आश्रित जो मुकुन्दानन्द आदिक नैष्ठिक ब्रह्मचारी तथा हमारे आश्रित मयाराम भट्ट आदि गृहस्थ सत्संगी । (४)

सधवा विधवा योषा याश्च मच्छिष्यतां गता: ।
मुक्तानन्दादयो ये स्यु: साधवश्चाखिला अपि ।।५।।

तथा हमारे आश्रित सौभाग्यवती स्त्रियां और विधवा आदि सभी स्त्रियां और मुक्तानंद आदिक सब साधुजन । (५)

स्वधर्मरक्षिका मे तै: सर्वैर्वाच्या: सदाशिष: ।
श्रीमन्नारायणस्मृत्या सहिता: शास्त्रसम्मता: ।।६।।

उपरोक्त सब लोगोंको स्वधर्मकी रक्षा करनेवाला शास्त्रोमें

प्रमाणभूत, श्रीमन्नारायणकी स्मृति समेत, हमारे शुभ आशीर्वाद हैं। (६)

एकाग्रेणैव मनसा पत्रीलेखः सहेतुकः ।
अवधार्योयमखिलैः सर्वजीवहितावहः ।।७।।

यह शिक्षापत्री लिखने का जो उदेश्य है वो हमारे सब आश्रितगण एकाग्र मनसे धारण करें, क्योंकि यह शिक्षापत्री सब जीवोंका कल्याण करनेवाली हैं। (७)

ये पालयन्ति मनुजाः सच्छास्त्रप्रतिपादितान् ।
सदाचारान् सदा तेऽत्र परत्र च महासुखाः ।।८।।

सत् शास्त्र जैसे कि श्रीमद् भागवत पुराण आदिक शास्त्रोमें जीवों के कल्याण केलिए प्रतिपादित किये हुए जो सदाचार हैं उनका जो मनुष्य पालन करते हैं, वे इस लोकमें और परलोकमें बहुत सुखी होते हैं। (८)

तानुल्लङ्घ्यात्र वर्तन्ते ये तु स्वैरं कुबुद्धयः ।
त इहामुत्र च महल्लभन्ते कष्टमेव हि ।।९।।

और जो कुबुद्धिवाले लोग उन सदाचारोंका उल्लंघन करके अपनी इच्छानुसार बर्ताव करते हैं वे इस लोकमें और परलोकमें निश्चय बहुत कष्ट प्राप्त करते हैं। (९)

अतो भवद्भिर्मच्छिष्यैः सावधानतयाखिलैः ।
प्रीत्यैतामनुसृत्यैव वर्तितव्यं निरन्तरम् ।।१०।।

इस लिए हमारे सब शिष्यगण अत्यन्त सावधानीपूर्वक और प्रीतिपूर्वक इस शिक्षापत्रीका निरन्तर अनुसरण करें और (सावधानीसे निरन्तर) बर्ताव करें। (१०)

कस्यापि प्राणिनो हिंसा नैव कार्यात्र मामकैः ।
सूक्ष्मयूकामत्कुणादेरपि बुद्ध्या कदाचन ।।११।।

भगवान श्री स्वामिनारायण सब सत्संगीओ के लीये साधारण धर्म लिखते हैं।

हमारे आश्रित सत्संगी किसी भी जीव प्राणी मात्रकी हिंसा न करें और हमारे आश्रितगण जानबूझकर छोटे जूँ, खटमल आदि जीवजंतुकी हिंसा भी कभी न करें। (११)

देवतापितृयागार्थमप्यजादेश्च हिंसनम् ।
न कर्तव्यमहिंसैव धर्मः प्रोक्तोस्ति यन्महान् ।।१२।।

देवता और पितृयज्ञ के लिए भी बकरी आदि जीवोंकी हिंसा न करें, क्यों कि अहिंसा कोही शास्त्रमें महान धर्म कहा है। (१२)

स्त्रिया धनस्य वा प्राप्त्यै साम्राज्यस्य च वा क्वचित्।
मनुष्यस्य तु कस्यापि हिंसा कार्या न सर्वथा ।।१३।।

स्त्री धन अथवा राज्यकी प्राप्ति के लिए भी किसी भी मनुष्यकी हिंसा किसी प्रकारसे कभी भी न करें। (१३)

आत्मघातस्तु तीर्थेऽपि न कर्तव्यश्च न क्रुधा ।
अयोग्याचरणात् क्वापि न विषोद्बन्धनादिना ।।१४।।

आत्मघात तो तीर्थ में भी न करें तथा क्रोधसे भी न करें, अथवा कभी अपनेसे कोई अयोग्य आचरणहो जाय तो इससे घबडाकर भी आत्मघात न करें तथा झहर खा कर, गलेमें फांसी आदि उपायो द्वारा आत्मघात न करें।

न भक्ष्यं सर्वथा मांसं यज्ञशिष्टमपि क्वचित् ।
न पेयं च सुरामद्यमपि देवनिवेदितम् ।।१५।।

और मांस यज्ञका शेषरुप (प्रसाद)हो तो भी कभी न खायँ तथा देवका नैवेद्य हो तो भी मद्य या शराब न पीयें ।(१५)

अकार्याचरणे क्वापि जाते स्वस्य परस्य च ।
अङ्गच्छेदो न कर्तव्यः शस्त्राद्यैश्च कुधापि वा ।।१६।।

और कभी अपनेसे अथवा दुसरेसे कोई अनुचित आचरण हो जाय तो इससे क्रोधमें आकर अपने अंगका या दूसरेके अंगका शस्त्र आदिसे छेदन न करें । (१६)

स्तेनकर्म न कर्तव्यं धर्मार्थमपि केनचित् ।
सस्वामिकाष्ठपुष्पादि न ग्राह्यं तदनाज्ञया ।।१७।।

और हमारे सत्संगी धर्म कार्य के लिये भी चोरीका कर्म न करें तथा जीसका अन्य कोई मालिक है ऐसी कोई वस्तु, काष्ठ, पुष्प आदि भी मालिकके पुछे बिना न लें । (१७)

व्यभिचारो न कर्तव्यः पुम्भिः स्त्रीभिश्च मां श्रितैः।
द्यूतादि व्यसनं त्याज्यं नाद्यं भङ्गादि मादकम् ।।१८।।

हमारे आश्रित पुरुष तथा स्त्रियाँ कोई भी व्यभिचार न करें तथा जुआ (जुगार) आदि व्यसनोंका त्याग करें, और भांग आदि मादक या नशा करनेवाली चीजोंको न खायें और न पीयें । (१८)

अग्राह्यान्नेन पक्वं यदन्नं तदुदकं च न ।
जगन्नाथपुरोऽन्यत्र ग्राह्यं कृष्णप्रसाद्यपि ।।१९।।

जिसके हाथका पकाया हुआ अन्नका भक्षण वर्ज्य हो (निषेध हो) उसका अन्न तथा उसके पात्रका जल जगन्नथ पुरी को छोड कर अन्यत्र, भगवान का प्रसाद हो तो भी, नहीं लेना चाहिए । (१९)

मिथ्यापवादः कस्मिंश्चिदपि स्वार्थस्यसिद्धये ।
नारोप्यो नापशब्दाश्च भाषणीयाः कदाचन ।।२०।।

अपने स्वार्थकी सिद्धिके लिये किसी पर भी जुठा आरोप न लगायें तथा किसीको कभी भी गालियाँ न दें । (२०)

देवतातीर्थविप्राणां साध्वीनां च सतामपि ।
वेदानां च न कर्तव्या निन्दा श्रव्या न च क्वचित्। ।।२१।।

देवता, तीर्थ, ब्राह्मण, पतिव्रता स्त्री, साधु और वेद- इनकी निन्दा कभी भी न करें, और दुसरोंके मुखसे भी न सुनें ।(२१)

देवतायै भवेद्यस्यै सुरामांसनिवेदनम् ।
यत्पुरोजादिहिंसा च न भक्ष्यं तन्निवेदितम् ।।२२।।

जिस देवता को मदिरा और मांस का नैवेद्य लगता हो तथा जिस देवता के आगे बकरी आदि जीवों की हिंसा होती हो उस देवता का नैवेद्य या प्रसाद को न खायें । (२२)

दृष्ट्वा शिवालयादीनि देवागाराणि वर्त्मनि ।
प्रणम्य तानि तद्देवदर्शनं कार्यमादरात् ।।२३।।

मार्गमें चलते, शिवालय आदि देवस्थान को देखकर उसे नमस्कार करना चाहिए तथा आदरपूर्वक उस देवका दर्शन करना चाहिए २३

स्ववर्णाश्रमधर्मो यः स हातव्यो न केनचित् ।
परधर्मो न चाचर्यो न च पाखण्डकल्पितः ।।२४।।

अपने अपने वर्णाश्रम धर्म का कोई भी सत्संगी त्याग न करें, परधर्म का आचरण न करें और पाखण्ड धर्म का और कल्पित धर्म का भी आचरण न करें।(२४)

कृष्णभक्तेः स्वधर्माद्वा पतनं यस्य वाक्यतः ।
स्यात्तन्मुखान्न वै श्रव्याः कथावार्ताश्च वा प्रभोः।।२५।।

जिस के वचन सुनने से श्रीकृष्ण भगवान की भक्तिमें और स्वधर्म से पतन हो जाय उस के मुख से भगवान की कथावार्ता न सुने। (२५)

स्वपरद्रोहजननं सत्यं भाष्यं न कर्हिचित् ।
कृतघ्नसङ्गस्त्यक्तव्यो लुञ्चा ग्राह्या न कस्यचित् ।।२६।।

जिस सत्य वचन बोलने से अपना या दूसरे का द्रोह हो जाए, ऐसा सत्य वचन कभी भी न बोलें और कृतघ्नी मनुष्य के संग का त्याग करें और(व्यवहार कार्य में)किसी सेरिश्वत(लांच)न लें । (२६)

चोरपापिव्यसनिनां सङ्गः पाखण्डिनां तथा ।
कामिनां च न कर्तव्यो जनवञ्चनकर्मणाम् ।।२७।।

चोर, पापी, व्यसनी, पाखंडी और कामी लोगों का तथा (कीमिया आदिक क्रिया द्वारा) मनुष्यों को ठगनेवालोंकी संगत न करें। (२७)

भक्तिं वा ज्ञानमालम्ब्य स्त्रीद्रव्यरसलोलुभाः ।
पापे प्रवर्तमानाः स्युः कार्यस्तेषां न सङ्गमः ।।२८।।

जो लोंग भक्ति अथवा ज्ञान का अवलम्बन करके स्त्री, द्रव्य तथा रसास्वादमें अतिशय लोलुप रहते हुए पापकर्ममें प्रवृत हैं, ऐसे मनुष्यों का समागम न करें। (२८)

कृष्णकृष्णावताराणां खण्डनं यत्र युक्तिभिः ।
कृतं स्यात्तानि शास्त्राणि न मान्यानि कदाचन ।।२९।।

जिन शास्त्रो में युक्तियों द्वारा भगवान श्रीकृष्ण तथा उनके (वराहादि) अवतारों का खंडन किया दया हो उन शास्त्रों को कभी न मानें और न सुनें। (२९)

अगालितं न पातव्यं पानीयं च पयस्तथा ।
स्नानादि नैव कर्तव्यं सूक्ष्मजन्तुमयाम्भसा ।।३०।।

बिना छाने हुअ पानी और दूध को पीना नहीं तथा जिस जलमें सूक्ष्म जंतु हो उस जल से स्नानादि क्रिया नहीं करनी। (३०)

यदौषधं च सुरया सम्पृक्तं पललेन वा ।
अज्ञातवृत्तवैद्येन दत्तं चाद्यं न तत् क्वचित ।।३१।।

जो औषध मद्य तथा मांस से युक्त हो उस औषध को कभी भी पीना और खाना नहीं। तथा जिस वैद्य का आचरण मालूम न हो उस वैद्यने दिये हुए औषध को भी नहीं खाना। (३१)

स्थानेषु लोकशास्त्राभ्यां निषिद्धेषु कदाचन ।
मलमूत्रोत्सर्जनं च न कार्यं ष्ठीवनं तथा ।।३२।।

लोक तथा शास्त्रोंने मल-मूत्र करने केलिये निषिद्ध किये हुए स्थानोमें, (जैसे कि जीर्ण देवालय, नदी, तालाब को तट, मार्ग में वृक्ष की छाया, बाग बगीचे और बोये हुए खेत में) मलमूत्र न करें तथा थूकें भी नहीं। (३२)

अद्वारेण न निर्गम्यं प्रवेष्टव्यं न तेन च ।
स्थाने सस्वामिके वासः कार्योऽपृष्ट्वा न तत्पतिम् ।।३३।।

बिना दरवाजे से किसी स्थान में प्रवेश नहीं करना और निकलनाभी नहीं। जिस स्थान का कोई मालिक हो तो उसे पूछे बिना उस स्थान में बास नहीं करना। (३३)

ज्ञानवार्ताश्रुतिर्नार्या मुखात् कार्या न पूरुषैः ।
न विवादः स्त्रिया कार्यो न राज्ञा न च तज्जनैः।।३४।।

हमारे आश्रित पुरुष मात्र- स्त्रियों के मुख से ज्ञानवार्ता न सुनें तथा उस के साथ विवाद भी न करें और राजा के साथ और राजा के मनुष्यों के साथ भी विवाद न करें। (३४)

अपमानो न कर्तव्यो गुरूणां च वरीयसाम् ।
लोके प्रतिष्ठितानां च विदुषां शस्त्रधारीणाम् ।।३५।।

गुरुका अपमान नहीं करना तथा जो अति श्रेष्ठ हैं और जो लोग में प्रतिष्ठित हैं इन लोगौं का और विद्वान का तथा शस्त्रधारी का अपमान नहीं करना । (३५)

कार्यं न सहसा किञ्चित्कार्यो धर्मस्तु सत्वरम् ।
पाठनीयाधीतविद्या कार्यः सङ्गोन्वहं सताम् ।३६।

कोई भी कार्य बिना सोचे तत्काल नहीं करना चाहिए । परंतु धर्म संबन्धी कार्य तो तत्काल करना चाहिए । पढी हुई अपनी विद्या दूसरो को रढानी चाहिए और साधु पुरुषों का समागम नित्य करना चाहिए । (३६)

गुरुदेवनृपेक्षार्थं न गम्यं रिक्तपाणिभिः ।
विश्वासघातो नो कार्यः स्वश्लाघा स्वमुखेन च।

दुरु, देव और राजा के दर्शन के लिए खाली हाथ से जाना नहीं चाहिए तथा किसी का विश्वासघात करना नहीं और अपने मुख से अपनी प्रशंसा नहीं करना चाहिए । (३७)

यस्मिन् परिहितेऽपि स्युर्दृश्यान्यङ्गानि चात्मनः
तद्दूष्यं वसनं नैव परिधार्यं मदाश्रितैः ।।३८।।

और हमारे सभी आश्रित-सत्संगी जिस वस्त्र को धारण करने से अंग दिखाई पडे ऐसे अयोग्य वस्त्र धारण न करें। (३८)

धर्मेण रहिता कृष्णभक्तिः कार्या न सर्वथा ।
अज्ञनिन्दाभयान्नैव त्याज्यं श्रीकृष्णसेवनम् ।।३९।।

धर्म रहित श्री कृष्ण भगवान की भक्ति कभी भी न करें तथा अज्ञानी पुरुषों की निन्दा के भय से श्रीकृष्ण भगवान की सेवा न त्यागें ३९

उत्सवाहेषु नित्यं च कृष्णमन्दिरमागतैः ।
पुम्भिः स्पृश्या न वनितास्तत्र ताभिश्च पुरुषाः ।।४०।।

उत्सवों के दिनो में तथा प्रतिदिन श्रीकृष्ण भगवान के मन्दिर में आए हुए सत्संगी पुरुषों ने उस मंदिर में स्त्रियों का स्पर्श करना नहीं तथा स्त्रियोंने पुरुषों का स्पर्श करना नहीं ।४०

कृष्णदीक्षां गुरोः प्राप्तैस्तुलसीमालिके गले ।
धार्येनित्यं चोर्ध्वपुण्ड्रं ललाटादौ द्विजातिभिः ।४१।

धर्मवंशी गुरु द्वारा जिनको श्रीकृष्ण भगवान कीदीक्षा प्राप्त हुई हैं, ऐसे ब्राह्मण,क्षत्रिय, वैश्य वर्ण के हमारे सब सत्संगी गले में तुलसी की दोहरी माला और ललाट, हृदय और दो हाथ इनचार जगहों पर उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण करें।

तत्तु गोपीचन्दनेन चन्दनेनाथवा हरेः ।
कार्यं पूजावशिष्टेन केशरादियुतेन च ।।४२।।

वह तिलक गोपी चन्दनसे अथवा भगवानकी पूजा करने से बचा केशरादि युक्त चन्दन से करना चाहिए । (४२)

तन्मध्य एव कर्तव्यः पुण्ड्रद्रव्येण चन्द्रकः ।

कुडकुमेनाथवा वृत्तो राधालक्ष्मीप्रसादिना ।।४३।।

और उस तिलक के बीच में ही गोल टीका गोपी चन्दन का करना चाहिए अथवा राधिकाजी और लक्ष्मीजी की प्रसादी रुप कुंकुम का गोलाकार टीका करना चाहिए । (४३)

सच्छूद्राः कृष्णभक्ता ये तैस्तु मालोर्ध्वपुण्ड्रके ।

द्विजातिवद्धारणीये निजधर्मेषु संस्थितैः ।।४४।।

अपने धर्म में रहने वाले श्रीकृष्ण के भक्त जो सत्-शूद्र हैं वे लोग द्विजों की तरह उर्ध्वपुंड्र तिलक तथा तुलसी की माला धारण करें (४४)

भक्तैस्तादितरैर्माले चन्दनादीन्धनोद्भवे ।

धार्ये कण्ठे ललाटेऽथ कार्यः केवलचन्द्रकः ।४५।

उन सत् शूद्रों से अन्य, द्वि जाति से निम्न कोटि के (असत् शूद्र) हैं । उन्हें चन्दनादिक काष्ठ की माला जो भगवान की प्रसादीरुप हो, वह धारण करें तथा ललाट में केवल गोलाकार टीका करें परन्तु तिलक न करें ।(४५)

त्रिपुण्ड्ररुद्राक्षधृतिर्येषां स्यात्स्वकुलागता ।

तैस्तु विप्रादिभिः क्वापि न त्याज्या सा मदाश्रितैः ।।४६।।

हमारे आश्रित ब्रह्मणादिक त्रिपुँड्र तथा रुद्राक्ष की माला धारण करें- ये दोनों चिह्न जो अपने कुल की परम्परा से चले आये हो तो वैसे ब्राह्मणादिक हमारे अश्रित त्रिपुण्ड्र तथा रुद्राक्ष का त्याग न करें । (४६)

ऐकात्म्यमेव विज्ञेयं नारायणमहेषयोः ।

उभयोर्ब्रह्मरूपेण वेदेषु प्रतिपादनात् ।।४७।।

नारायण और शिवजी- उन दोनो का एक रुप समझना, क्यों कि वेदों में उन दोनों को ब्रह्मरुप में ही प्रतिपादित किया है ।(४७)

शास्त्रोक्त आपद्धर्मो यः स त्वल्पापदि कर्हिचित् ।

मदाश्रितैर्मुख्यतया ग्रहीतव्यो न मानवैः ।।४८।।

हमारे आश्रित सब सत्संगी लोग नित्य सूर्योदय के पहेले जादें और श्रीकृष्ण भगवान का स्मरण करने बाद शोचादि क्रिया करने जायँ । (४८)

प्रत्यहं तु प्रबोधव्यं पूर्वमेवोदयाद्रवेः ।

विधाय कृष्णस्मरणं कार्यः शौचविधिस्ततः ।४९।

हमारे आश्रित मनुष्य शास्त्र में कहे गहे आपत्काल के धर्मको अल्प आपत्काल में विशेष रुप से कभी ग्रहण न करें । (४९)

उपविश्यैव चैकत्र कर्तव्यं दन्तधावनम् ।

स्नात्वा शुच्यम्बुना धौते परिधार्ये च वाससी ।।५०।।

उस के बाद एक स्थान में बैठकर दन्त शुद्धि करें उस के बाद शुद्ध पवित्र जल से स्नाना करके, एक धोया हुआ वस्त्र पहनें और दुसरा ओढें । (५०)

उपविश्य ततः शुद्ध आसने शुचिभूतले ।

असडकीर्ण उपस्पृश्यं प्राडमुखं वोत्तरामुखम् ।५१।

पीछे तुरंत ही पवित्र पृथ्वी पर बछाया हुआ शुद्ध और जिस पर अच्छी तरह से बैठा जाय ऐसे आसन पर पूर्वमुख या उत्तरमुख बैठकर आचमन करें । (५१)

कर्तव्यमूर्ध्वपुण्ड्रं च पुम्भिरेव सचन्द्रकम् ।

कार्यः सधवानारीभिर्भाले कुडकुमचन्द्रकः ।५२।

और हमारे आश्रित सत्संगी पुरुषमात्र टीका सहित उर्ध्वपुंड्र तिलक करें और सौभाग्यवती स्त्रियां तो अपने ललाटमें कुंकुमकी टीकी करें। (५२)

पुण्ड्रं वा चन्द्रको भाले न कार्यो मृतनाथया ।
मनसा पूजनं कार्यं ततः कृष्णस्य चाखिलैः ।।५३।।

और विधवा स्त्रियां अपने भालमें तिलक न करें और टीका भी न लगावें, उस के बाद सब सत्संगी मनसे कल्पित चंदन, पुष्प इत्यादिकसे श्रीकृष्ण भगवानकी मानसी पूजा करें। (५३)

प्रणम्य राधाकृष्णस्य लेख्यार्चां तत आदरात् ।
शक्त्या जपित्वा तन्मन्त्रं कर्तव्यं व्यवहारिकम् ।।५४।।

उसके बाद श्री राधा-कृष्ण की चीत्र प्रतिमाको आदरपूर्वक दर्शन करके और नमस्कार करके अपनी शक्ति अनुसार श्रीकृष्ण का अष्टाक्षर मन्त्र का जाप करें और बाद में व्यावहारिक कार्य में लगें। (५४)

ये त्वम्बरीषवद्भक्ताः स्युरिहात्मनिवेदिनः ।
तैश्च मानसपूजान्तं कार्यमुक्तक्रमेण वै ।।५५।।

और जो हमारे सत्संगी, अम्बरीष राजा की तरह आत्मनिवेदी उत्तम भक्त हैं। वे लोग भी उपरोक्त मानसी पूजा पर्यन्त सभी क्रियाएँ करें (५५)

शैली वा धातुजा मूर्तिः शालग्रामोऽर्च्य एव तैः ।
द्रव्यैर्यथाप्तैः कृष्णस्य जप्योऽथाष्टाक्षरो मनुः ।५६।

वे लोग अपनी शक्ति अनुसार प्राप्त हुई फल, पुष्पादिक सामग्री से पाषाण अथवा धातु की श्रीकृष्ण भगवान की प्रतिमा अथवा शालीग्राम की देश काल के अनुसार पूजा करें उस के बाद अष्टाक्षर मन्त्र का जाप करें। (५६)

स्तोत्रादेरथ कृष्णस्य पाठः कार्यः स्वशक्तितः ।
तथाऽनधीतगीर्वाणैः कार्यं तन्नामकीर्तनम् ।।५७।।

उस के बाद श्रीकृष्ण भगवान के स्तोत्र अधवा ग्रंथो का पाठ अपनी शक्ति अनुसार करें और जिन्होंने संस्कृत भाषा का अभ्यास किया नहिं है वे लोग भगवान के नाम कीर्तन करें। (५७)

हरेर्विधाय नैवेद्यं भोज्यं प्रासादिकं ततः ।
कृष्णसेवापरैः प्रीत्या भवितव्यं च तैः सदा ।५८।

उसके बाद भगवान को नैवेद्य अर्पण कर के उस नैवेद्य को प्रसाद रुप से खायँ तथा आत्मनिवेदी भक्तजन सदा प्रीति से श्रीकृष्ण भगवान की सेवा में तत्पर रहें। (५८)

प्रोक्तास्ते निर्गुणा भक्ता निर्गुणस्य हरेर्यतः ।
सम्बन्धात्तत्क्रियाः सर्वा भवन्त्येव हि निर्गुणाः ।। ५९।।

अैसे निर्गुण-अर्थात्-माया के सत्त्वादि तीन गुण रहित-जो श्रीकृष्ण भगवान-उन के सम्बन्ध से उन आत्मनिवेदी भक्तजनों की सब क्रियाएँ निर्गुण होती हैं। इस तरह उन आत्मनिवेदी भक्तों को भी निर्गुण कहते हैं। (५९)

भक्तैरेतैस्तु कृष्णायानर्पितं वार्यपि क्वचित् ।
न पेयं नैव भक्ष्यं च पत्रकन्दफलाद्यपि ।।६०।।

वे आत्मनिवेदी भक्तजन श्रीकृष्ण भगवान को अर्पण किये बिना कभी जल न पियें और पत्र, कंद, फलादि वस्तुएँ भी श्रीकृष्ण भगवान को आर्पण किये बिना न खायें। (६०)

सर्वैरशक्तौ वार्धक्याद्‌गरीयस्यापदाऽथवा ।
भक्ताय कृष्णमन्यस्मै दत्त्वा वृत्त्यं यथाबलम् ।।६१।।

हमारे आश्रित सब सत्संगी भक्तजन को वृद्ध अवस्था से या कोई महान आपत्काल से अशक्त हो जाने पर अपनी सेवा का श्रीकृष्ण का स्वरुप-दूसरे भक्तजन को देकर, अपनी शक्ति अनुसार आचरण करना चाहिए । (६१)

आचार्येणैव दत्तं यद्यच्च तेन प्रतिष्ठितम् ।
कृष्णस्वरूपं तत्सेव्यं वन्द्यमेवेतरत्तु यत् ।।६२।।

अपने आचार्य द्वारा दी हुई अथवा उन से प्रतिष्ठित की गई जो श्रीकृष्ण भगवान की मूर्ति का स्वरुप, वेही सेवा के योग्य है, इस से अतिरिक्त तो केवल नमस्कार करने योग्य है परंतु सेवा के योग्य नहीं है । (६२)

भगवन्मन्दिरं सर्वैः सायं गन्तव्यमन्वहम् ।
नामसङ्कीर्तनं कार्यं तत्रोच्चै राधिकापतेः ।।६३।।

और हमारे आश्रित सब सत्संगी प्रतिदिन सायंकाल भगवान के मंदिर में जाना चाहिए, और श्रीराधाजी के पति श्रीकृष्ण भगवान के नाम का उच्च स्वर से कीर्तन करना चाहिए । (६३)

कार्यास्तस्य कथावार्ताः श्रव्याश्च परमादरात् ।
वादित्रसहितं कार्यं कृष्णकीर्तनमुत्सवे ।।६४।।

तथा उन श्रीकृष्ण भगवान की कथावार्ता परम आदर से करनी तथा सुननी चाहिए और उत्सवों के दिन मृदंग आदि वाद्य सहित भगवानका कीर्तन करना चाहिए । (६४)

प्रत्यहं कार्यमित्थं हि सर्वैरपि मदाश्रितैः ।
संस्कृतप्राकृतग्रन्थाभ्यासश्चापि यथामति ।।६५।।

हमारे आश्रित सभी सत्संगी उपरोक्त प्रकार से नित्य नियम प्रतिदिन करें और अपनी बुद्धि के अनुसार संस्कृत तथा प्राकृत ग्रंथोंका अभ्यास करें (६५)

यादृशैर्यो गुणैर्युक्तस्तादृशे स तु कर्मणि ।
योजनीयो विचार्यैव नान्यथा तु कदाचन ।।६६।।

जो मनुष्य जिन गुणों से युक्त हो उस मनुष्य को वैसे कार्यमें सोचकर लगाना चाहिए किन्तु जिस कार्यमें जो योग्य न हो उस कार्यमें उस को कभी भी लगाना नहीं चाहिए । (६६)

अन्नवस्त्रादिभिः सर्वे स्वकीयाः परिचारकाः ।
सम्भावनीयाः सततं यथायोग्यं यथाधनम् ।।६७।।

हमारे सभी आश्रित जिन के पास सेवक हैं, उन सबकी अपनी शक्ति अनुसार अन्नवस्त्रादि द्वारा निरन्तर यथायोग्य संभाल लेना चाहिए । (६७)

यादृग्गुणो यः पुरुषस्तादृशा वचनेन सः ।
देशकालानुसारेण भाषणीयो न चान्यथा ।।६८।।

जो पुरुष जैसे गुणो से युक्त हो उस पुरुष को ऐसे बचनों से देशकाल के अनुसार बुलाना चाहिए परंतु अन्य प्रकार से बुलाना नहीं चाहिए (६८)

गुरुभूपालवर्षिष्ठत्यागिविद्वत्तपस्विनाम् ।
अभ्युत्थानादिना कार्यः सन्मानो विनयान्वितैः ।।६९।।

हमारे सभी सत्संगी भक्तजन-जब गुरु, राजा, अतिवृद्ध, त्यागी, विद्वान, तपस्वी- ये सब अपने पास आयँ तब उन को देख के खडे होकर विनय से सन्मान करना चाहिए । (६९)

नोरौ कृत्वा पादमेकं गुरुदेवनृपान्तिके ।
उपवेश्यं सभायां च जानू बद्ध्वा न वाससा ।।७०।।

और गुरु देव तथा राजा के सामने अथवा सभामें पाँव पे पाँव चढाकर न बैठें और अपने दोनों घुटनों को वस्त्र से बांधकर न बैठें । (७०)

विवादो नैव कर्तव्यः स्वाचार्येण सह क्वचित् ।
पूज्योऽन्नधनवस्त्राद्यैर्यथाशक्ति स चाखिलैः ।।७१।।

तथा हमारे सर्वे आश्रित भक्तजन अपने आचार्य के साथ कभी भी विवाद न करें तथा अपनी शक्ति अनुसार अन्न धन वस्त्रादि से उनकी सेवा करें । (७१)

तमायान्तं निशम्याशु प्रत्युद्गन्तव्यमादरात् ।
तस्मिन् यात्यनुगम्यं च ग्रामान्तावधि मच्छ्रितैः ।।७२।।

तथा हमारे शिष्यजन अपने आचार्य को आते हुए सुनकर आदरपूर्वक तत्काल उन के सन्मुख जायँ और आचार्य अपने गाँव से जव वापस लौटते हों तब गांव की सीमा तक उनका बहुमान करने के लिए साथ में जायँ (७२)

अपि भूरिफलं कर्म धर्मापेतं भवेद्यदि ।
आचार्यं तर्हि तन्नैव धर्मः सर्वार्थदोऽस्ति हि ।।७३।

और बहुत फल देनेवाला कर्म हो परंतु धर्मरहित हो तो उसका आचरण करना नहीं चाहिए क्योंकि धर्म ही सब फल या अर्थको देनेवाला है । (७३)

पूर्वैर्महद्भिरपि यदधर्माचरणं क्वचित् ।
कृतं स्यात्तत्तु न ग्राह्यं ग्राह्यो धर्मस्तु तत्कृतः ।७४।

प्राचीन समयमें महापुरुषोंने भी यदि कोई अधर्माचरण किया हो तो उसको ग्रहण न करें, परंतु उन्होंने जो धर्माचरण किया हो उसको ग्रहण करें । (७४)

गुह्यवार्ता तु कस्यापि प्रकाश्या नैव कुत्रचित् ।
समदृष्ट्या न कार्यश्च यथार्हार्चाव्यतिक्रमः ।७५।

किसीकी गुप्त बातको कभी भी प्रकाशित करनी नहीं चाहिए. और जिसका जैसा सन्मान करना उचित हो उसका इसी रीतिसे सन्मान करें, किन्तु समदृष्टिसे उल्लंघन न करें । (बडे और छोटेके सन्मानमें यथा योग्यता रखी है) (७५)

विशेषनियमो धार्यश्चातुर्मास्येऽखिलैरपि ।
एकस्मिन् श्रावणे मासि स त्वशक्तैस्तु मानवैः।। ७६।।

हमारे सब आश्रित सत्संगी जनको चातुर्मासमें विशेष नियमको धारण करना चाहिए तथा जो मनुष्य असमर्थ हो वे केवल श्रावण मासमें विशेष नियम धारण करें । (७६)

विष्णोः कथायाः श्रवणं वाचनं गुणकीर्तनम् ।
महापूजा मन्त्रजपः स्तोत्रपाठः प्रदक्षिणाः ।।७७।।

विशेष नियम के बारेमें- भगवान की कथा का श्रवण करना, कथा पढना भगवान केगुणो के कीर्तन करना, भगवान की महापूजा (पंचामृत स्नान से) करना, भगवान के मंत्र का जाप करना, स्तोत्र का पाठ करना, भगवान की प्रदक्षिणा करनीं । (७७)

साष्टाङ्गप्रणतिश्चेति नियमा उत्तमा मताः ।
एतेष्वेकतमो भक्त्या धारणीयो विशेषतः ।।७८।।

तथा भगवान को साष्टांग प्रणाम करना, ये आठ नियम

हमने उत्तम माने हैं, उन नियमों में से कोई एक नियम चातुर्मास में विशेष करके भक्ति से धारण करना चाहिए। (७८)

एकादशीनां सर्वासां कर्तव्यं व्रतमादरात् ।
कृष्णजन्मदिनानां च शिवरात्रेश्च सोत्सवम् ।७९।

और सब एकादशीयों का व्रत भी आदर से करना चाहिए, तथा श्रीकृष्णभगवान का जन्माष्टमीव्रत तथा शिवरात्रि का व्रत बडे आदर से करना चाहिए और उन व्रतों के दिन बडा उत्सव करना चाहिए। (७९)

उपवासदिने त्याज्या दिवानिद्रा प्रयत्नतः ।
उपवासस्तया नश्येन्मैथुनेनेव यन्नृणाम् ।।८०।।

उपवास के दिन प्रयत्न से दिनकी निद्राका त्याग करना चाहिए,क्योंकि मैथुन से जैसे मनुष्यों के उपवास का नाश होता हैं वैसे ही दिनकी निद्रा से भी उपवास का नाश होता है। (८०)

सर्ववैष्णवराजश्रीवल्लभाचार्यनन्दनः ।
श्रीविठ्ठलेशः कृतवान् यं व्रतोत्सवनिर्णयम् ।।८१।।
कार्यास्तमनुसृत्यैव सर्व एव व्रतोत्सवाः ।
सेवारीतिश्च कृष्णस्य ग्राह्या तदुदितैव हि ।।८२।।

सभी वैष्णवोंमें श्रेष्ठ श्री वल्लभाचार्यजी के पुत्र श्री विठ्ठलनाथजीने जो व्रत तथा उत्सव का निर्णय किया है, उस के अनुसार ही सब व्रत तथा उत्सव करना चाहिए तथा उस में विठ्ठलनाथजीने जो कृष्णभगवान की सेवारीति कही है उसको ही ग्रहण करना चाहिए। (८१,८२

कर्तव्या द्वारिकामुख्यतीर्थयात्रा यथाविधि ।
सर्वैरपि यथाशक्ति भाव्यं दीनेषु वत्सलैः ।।८३।।

और हमारे सभी आश्रित भक्तजन यथाशक्ति, द्वारिका आदि तीर्थों की यात्रा विधिपूर्वक करनी चाहिए और शक्ति अनुसार दीन दरिद्र लोगों की और दयालु रहना चाहिए। (८३)

विष्णुः शिवो गणपतिः पार्वती च दिवाकरः ।
एताः पूज्यतया मान्या देवताः पञ्च मामकैः ।।८४।।

और हमारे आश्रित भक्तजनोंने-विष्णु, शिव, गणपति, पार्वती, तथा सूर्य इन पाँच देवो को पूज्यभाव से मानना चाहिए। उनको हमें पूज्य माने हैं। (८४)

भूताद्युपद्रवे क्वापि वर्म नारायणात्मकम् ।
जप्यं च हनुमन्मन्त्रो जप्यो न क्षुद्रदैवतः ।।८५।।

और कभी भूत प्रेतादि का उपद्रव हों, तो नारायण कवच का पाठ करना, और हनुमानजी के मंत्र का जाप करना, परंतु कोई क्षुद्र देवता के स्तोत्र और मंत्र का जाप करना नहीं चाहिए

रवेरिन्दोश्चोपरागे जायमाने पराः क्रियाः ।
हित्वाशु शुचिभिः सर्वैः कार्यः कृष्णमनोर्जपः ।८६।

सूर्य और चन्द्र ग्रहण लगने पर हमारे सब सत्संगी अन्य क्रियाओं का तत्काल त्याग करके पवित्र होकर श्रीकृष्ण भगवान के मन्त्र का जाप करें। (८६)

जातायामथ तन्मुक्तौ कृत्वा स्नानं सचेलकम् ।
देयं दानं गृहिजनैः शक्त्यान्यैस्त्वर्च्य ईश्वरः ।८७।

ग्रहण छूट जाने पर वस्त्र सहित स्नान करके जो गृहस्थ हैं वे यथाशक्ति दान करें और जो त्यागी हैं वे भगवान की पूजा करें। (८७)

जन्माशौचं मृताशौचं स्वसम्बन्धानुसारतः
पालनीयं यथाशास्त्रं चातुर्वर्ण्यजनैर्मम ।।८८।।

और हमारे आश्रित सत्संगी चारों-वर्णों के लोग जन्म का सूतक और मृत्यु का सूतक अपने अपने संबंध अनुसार यथाशास्त्र पालन करें। (८८)

भाव्यं शमदमक्षान्तिसंतोषादिगुणान्वितैः ।
ब्राह्मणैः शौर्यधैर्यादिगुणोपेतैश्च बाहुजैः ।।८९।।

जो ब्राह्मणवर्ण हो उसे शम, दम, क्षमा, तथा संतोष आदि गुण युक्त होना चाहिए और जो क्षत्रिय वर्ण हो, उसे शौर्य, धैर्य आदि गुणों से युक्त होना चाहिए। (८९)

वैश्यैश्च कृषिवाणिज्यकुसीदमुखवृत्तिभिः ।
भवितव्यं तथा शूद्रैर्द्विजसेवादिवृत्तिभिः ।।९०।।

जो वैश्य हैं वे खेती व्यपार और लेन-देन आदि वृत्तियाँ द्वारा जीवन निर्वाह करें और जो शूद्र वर्ण के हैं उन्होंने ब्राह्मणादि तीन वर्णो की सेवा करनी चाहिए। (९०)

संस्काराश्चाह्निकं श्राद्धं यथाकालं यथाधनम् ।
स्वस्वगृह्यानुसारेण कर्तव्यं च द्विजन्मभिः ।।९१।।

ब्राह्मण आदि लोग समय के अनुसार तथा धनसंपत्ति के अनुसार - अपने गृह्यसूत्र के मुताबिक गर्भाधानादिक संस्कार तथा आह्निक क्रिया, और श्राद्धादिक पितृकर्म करें। (९१)

अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि गुरु वा लघु पातकम् ।
क्वापि स्यात्तर्हि तत्प्रायश्चित्तं कार्यं स्वशक्तितः।

कभी ज्ञान से और अज्ञान से छोटा अथवा बडा पाप हो जाय तो अपनी शक्ति अनुसार उस पाप का प्रायश्चित करें। (९२)

वेदाश्च व्याससूत्राणि श्रीमद्भागवताभिधम् ।
पुराणं भारते तु श्रीविष्णोर्नामसहस्रकम् ।।९३।।
तथा श्रीभगवद्गीता नितिश्च विदुरोदिता ।
श्रीवासुदेवमाहात्म्यं स्कन्दवैष्णवखण्डगम् ।।९४।।
धर्मशास्त्रान्तर्गता च याज्ञवल्क्यऋषेः स्मृतिः ।
एतान्यष्ट ममेष्टानि सच्छास्त्राणि भवन्ति हि ।९५।

चार वेद तथा व्याससूत्र, तथा श्रीमद्भागवत् पुराण तथा महाभारत में कहे श्री विष्णुसहस्रनाम तथा श्रीमदभगवद् गीता और विदुरजीने कही नीति तथा स्कंदपुराण के विष्णुखण्ड में रही - जो याज्ञवल्क्य ऋषि की स्मृति - ये जो आठ सत् शास्त्र हैं, वे हमें इष्ट हैं। (९३-९४-९५)

स्वहितेच्छुभिरेतानि मच्छिष्यैः सकलैरपि ।
श्रोतव्यान्यथ पाठ्यानि कथनीयानि च द्विजैः ।।९६।।

अपने हित को चाहनेवाले हमारे सब शिष्यजन - इन आठ शास्त्रों को पढें ओर पढायें तथा उन की कथा करें। (९६)

तत्राचारव्यवहृतिनिष्कृतानां च निर्णये ।
ग्राह्यामिताक्षरोपेता याज्ञवल्क्यस्य तु स्मृतिः ।९७।

उन आठ सत् शास्त्रों में से, आचार, व्यवहार और प्रायश्चित के लिए मिताक्षरा टीकायुक्त याज्ञवल्क्य स्मृति को ग्रहण करना उचित है। (९७)

श्रीमद्भागवतस्यैषु स्कन्धौ दशमपञ्चमौ ।
सर्वाधिकतया ज्ञेयौ कृष्णमाहात्म्यबुद्धये ।।९८।।

उन आठ शास्त्रों में से श्रीमद्भागवत पुराण के दशमस्कन्ध तथा पच्चमस्कन्ध को श्रीकृष्ण भगवान का माहात्म्य जानने के लिए सब से अधिक जानना चाहिए । (९८)

दशमः पंचमः स्कन्धो याज्ञवल्क्यस्य च स्मृतिः
भक्तिशास्त्रं योगशास्त्रं धर्मशास्त्रं क्रमेण मे ।।९९।।

और दशमस्कन्ध, तथा पंचमस्कन्ध तथा याज्ञवल्क्य ऋषि की स्मृति ये तीन अनुक्रम से हमारे भक्तिशास्त्र और योगशास्त्र धर्मशास्त्र हैं। (९९)

शारीरकाणां भगवद्गीतायाश्चावगम्यताम् ।
रामानुजाचार्यकृतं भाष्यमाध्यात्मिकं मम ।।१००।।

और रामानुजाचार्यकृत जो व्याससूत्रों का भाष्य, तथा श्रीमद्भागवद् गीता का भाष्य ये दोनों हमारे आध्यात्मिक शास्त्र हैं, ऐसा समजना (१००)

एतेषु यानि वाक्यानि श्रीकृष्णस्य वृषस्य च ।
अत्युत्कर्षपराणि स्युस्तथा भक्तिविरागयोः ।।१०१।

उन सब शास्त्रों में जो श्रीकृष्ण भगवान के स्वरुप तथा धर्म, भक्ति और वैराग्य - उन चारों को अति श्रेष्ठता से कहे हैं । (१०१)

मन्तव्यानि प्रधानानि तान्येवेतरवाक्यतः ।
धर्मेण सहिता कृष्णभक्तिः कार्येति तद्रहः ।१०२।

उन वचनों को अन्य शास्त्र वचनों की अपेक्षा प्रधानरुप से मानना चाहिए । श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति, धर्म सहित करनी चाहिए, ऐसा उन सब शास्त्रों का रहस्य हैं । (१०२)

धर्मो ज्ञेयः सदाचारः श्रुतिस्मृत्युपपादितः ।
माहात्म्यज्ञानयुग्भूरिस्नेहो भक्तिश्च माधवे ।१०३।

श्रुति और स्मृति द्वारा प्रतिपादन किया हुआ जो सदाचार है उसे धर्म जानना चाहिए, और भगवान में माहात्म्य ज्ञान सहित जो बहुत स्नेह उसे भक्ति जाननी चाहिए । (१०३)

वैराग्यं ज्ञेयमप्रीतिः श्रीकृष्णेतरवस्तुषु ।
ज्ञानं च जीवमायेशरूपाणां सुष्ठु वेदनम् ।।१०४।।

तथा श्रीकृष्ण भगवान की सेवा अन्य पदार्थो में प्रेम न करना, इसी को वैराग्य जानना चाहिए, और जीव,माया, तथा ईश्वर के स्वरुपों को यथार्थ रुप से जानना, इस को ज्ञान कहा जाता है । (१०४)

हृत्स्थोऽणुसूक्ष्मश्चिद्रूपो ज्ञाता व्याप्याखिलां तनुम्
ज्ञानशक्त्या स्थितो जीवो ज्ञेयोच्छेद्यादिलक्षणः ।।१०५।।

और जो जीव है वह हृदय में रहा है, अणु- समान सूक्ष्म है चैतन्य रुप है, वह ज्ञाता है और अपनी ज्ञानशक्ति से समस्त शरीर मेंव्याप्त होकर रहा है, तथा अच्छेद्य, अभेद्य अजर, अमर इत्यादि लक्षणवाला है; ऐसा जीव को समझना चाहिए । (१०५)

त्रिगुणात्मा तमः कृष्णशक्तिर्देहतदीययोः ।
जीवस्य चाहंममताहेतुर्मायावगम्यताम् ।।१०६।।

माया का लक्षण है - वह त्रिगुणात्मिका, अथवा सत्त्य, रज, तम, गुणवाली है, अन्धकाररुप है, तथा श्रीकृष्ण भगवान की शक्ति है, और जीव को देह तथा देह के सम्बन्धी, मनुष्य तथा

पदार्थो में अहंभाव तथा ममत्व करानेवाली है; ऐसा,माया को समझनी चाहिए । (१०६)

हृदये जीववज्जीवे योऽन्तर्यामितया स्थितः ।
ज्ञेयः स्वतंत्र ईशोऽसौ सर्वकर्मफलप्रदः ।।१०७।।

भगवान का लक्षण है-वे जैसे हृदय में जीव रहा है - वैसे उसी जीव में अम्तर्यामी रहे हैं, तथा स्वतन्त्र हैं और सब जीवों के कर्मफल देनेवाले हैं । ऐसे ईश्वर को मानना चाहिए । १०७

स श्रीकृष्णः परंब्रह्म भगवान् पुरूषोत्तमः ।
उपास्य इष्टदेवो नः सर्वाविर्भावकारणम् ।।१०८।।

परब्रह्म पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण भगवान ही ईश्वर हैं, वे श्रीकृष्ण भगवान् ही हमारे सब के इष्टदेव हैं तथा उपासना करने योग्य हैं और सब अवतारों के (मत्स्यादिक के) कारणभूत हैं । (१०८)

स राधया युतो ज्ञेयो राधाकृष्ण इति प्रभुः ।
रुक्मिण्या रमयोपेतो लक्ष्मीनारायणः स हि।१०९।

वह भगवान श्रीकृष्ण जब राधिकाजी से युक्त हों तब राधाकृष्ण कहलाते हैं, तथा रुक्मिणीरुप लक्ष्मीजी से युक्त रहते हों तब लक्ष्मीनारायण कहलाते हैं । (१०९)

ज्ञेयोऽर्जुनेन युक्तोऽसौ नरनारायणाभिधः ।
बलभद्रादियोगेन तत्तन्नामोच्यते स च ।।११०।।

तथा श्रीकृष्ण जब अर्जुन से युक्त हो, तब नरनारायण कहलाते हैं । उसी प्रकार भगवान बलभद्र आदिके योगसे, वैसे नाम से कहलाते हैं (११०)

एते राधादयो भक्तास्तस्य स्युः पार्श्वतः क्वचित् ।
क्वचित्तदङ्गेतिस्नेहात्स तु ज्ञेयस्तदैकलः ।१११।

राधिकाजी आदि भक्तजन कभी भगवान की बाजु में रहते हैं और कभी अत्यन्त स्नेह से भगवान के अंग में बिराजमान रहते हैं, तब तो वे श्रीकृष्ण भगवान जैसे अकेले ही हो ऐसा समझना चाहिए । (१११)

स्वरूप में भेद नहीं जानना (रखना) ।

अतश्चास्य स्वरूपेषु भेदो ज्ञेयो न सर्वथा ।
चतुरादिभुजत्वं तु द्विबाहोस्तस्य चैच्छिकम् ।११२।

इस कारण श्रीकृष्ण भगवान के स्वरूपों में सभी प्रकार से भेद नहीं समझना चाहिए । और जो भगवान के सेवरूप में चतुर्भुज आदि भेद दिखाते हैं वह तो द्विभुज श्रीकृष्ण भगवान की इच्छा से हैं, ऐसा समझना चाहिए । (११२)

तस्यैव सर्वथा भक्तिः कर्तव्या मनुजैर्भुवि ।
निःश्रेयस्करं किञ्चित्ततोऽन्यन्नेति दृश्यताम् ।११३।

पृथ्वी पर सब मनुष्यो को श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति करनी चाहिए क्योंकि श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति के अलावा कल्याणकारक अन्य कोई भी वस्तु नहीं है ऐसा समझना चाहिए । (११३)

गुणिनां गुणवत्ताया ज्ञेयं ह्येतत् परं फलम् ।
कृष्णे भक्तिश्च सत्सङ्गोऽन्यथा यान्ति विदोऽप्यधः ।।११४।।

विद्यादि गुणवाले पुरुषों के गुणों का यह परम फल है कि श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति करना और सत्संग करना । इस के बिना विद्वान भी अधोगति प्राप्त करते हैं । (११४)

कृष्णस्तदवताराश्च ध्येयास्तत्प्रतिमापि च ।
न तु जीवा नृदेवाद्या भक्ता ब्रह्मविदोऽपि च ।११५।

श्रीकृष्ण भगवान तथा श्रीकृष्ण भगवान के जो अवतार हैं वे ही ध्यान करने के लिए योग्य हैं और श्रीकृष्ण भगवान की जो प्रतिमाएँ हैं वेभी ध्यान करने योग्य हैं अत: उनका ध्यान करना चाहिए परन्तु मनुष्य तथा देव आदि जो जीव हैं वे तो श्रीकृष्ण भगवान के भक्त हो अथवा ब्रह्मवेता हो तो भी ध्यान करने के लिए योग्य नहीं हैं । अत: उनका ध्यान नहीं करना चाहिए (११५)

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम् ।
विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा ।।११६।।

और स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण इन तीन देह से विलक्षण जो अपना जीवात्मा उस में ब्रह्मरूप की भावना करके उस ब्रह्मरूप से श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति सर्वदा करनी चाहिए । (११६)

श्रव्यः श्रीमद्भागवतदशमस्कन्ध आदरात् ।
प्रत्यहं वा सकृद्वर्षे वर्षे वाच्योऽथ पण्डितैः ।११७।

हमारे जो आश्रित हैं उन्हें श्रीमद् भागवत पुराण के दशम स्कन्ध को प्रतिदिन आदर से सुनना चाहिए अथवा वर्ष में एक बार अवश्य सुनना चाहिए और जो पंडित हैं इन को नित्य पाठ करना चाहिए अथवा वर्ष में एक बार अवश्य पाठ करना चाहिए । (११७)

कारणीया पुरश्चर्या पुण्यस्थानेऽस्य शक्तितः ।
विष्णुनामसहस्रादेश्चापि कार्येप्सितप्रदा ।।११८।।

उस दशम स्कन्ध का पुरश्चरण पवित्र स्थान में अपने सामर्थ्यानुसार करें तथा करावें, और विष्णुसहस्रनाम आदि स्तोत्र का पुरश्चरण भी अपने सामर्थ्यानुसार करें तथा करावें. यह पुरश्चरण कैसा है? तो अपने मनोवांछित फल देनेवाला है

दैव्यामापदि कष्टायां मानुष्यां वा गदादिषु ।
यथा स्वपररक्षा स्यात्तथा वृत्त्यं न चान्यथा ।११९।

कष्ट देनेवाली कोई देव सम्बन्धी, मनुष्य सम्बन्धी और रोगादि सम्बन्धी आपत्ति आने पर जिस तरह अपनी और दूसरो की रक्षा हो वैसे बर्ताव करना चाहिए परन्तु अन्य रीति से बर्ताव नहीं करना चाहिए । (११९)

देशकालवयोवित्तजातिशक्त्यनुसारतः ।
आचारो व्यवहारश्च निष्कृतं चावधार्यताम् ।१२०।

आचार, व्यवहार तथा प्रायश्चित- इन तीनों को देश, काल, अवस्था, द्रव्य, जाति तथा शक्ति अनुसार ही करना चाहिए । (१२०)

मतं विशिष्टाद्वैतं मे गोलोको धाम चेप्सितम् ।
तत्र ब्रह्मात्मना कृष्णसेवा मुक्तिश्च गम्यताम् ।१२१।

और हमारा मत विशिष्टाद्वैत है तथा गोलोक धाम हमें इष्ट है उन धाम में ब्रब्मरुप से श्रीकृष्ण भगवान की सेवा करना; इसे मुक्ति समझना चाहिए (१२१)

एते साधारणा धर्माः पुंसां स्त्रीणां च सर्वतः ।
मदाश्रितानां कथिता विशेषानथ कीर्तये ।।१२२।।

सामान्य धर्म के बाद सब के अपने अलग अलग
धर्म का श्री सहजानंद स्वामी उपदेश देते हैं ।

उपरोक्त सब धर्म, हमारे आश्रित, त्यागी, गृहस्थ स्त्री-पुरुष सब सत्संगियों के प्रति कहे हैं अथवा उन सभी के साधारण धर्म

कहे हैं । अब इन सब के विशेष धर्म कहते हैं । (१२२)

मज्ज्येष्ठावरजभ्रातृसुताभ्यां तु कदाचन ।
स्वासन्नसम्बन्धहीना नोपदेश्या हि योषितः ।१२३।

भगवान श्री स्वामिनारायण आचार्य और इन की पत्निओंका विशेष धर्म कहते हैं ।

हमारे बडे और छोटे भाई के दोनों पुत्र वे अपने समीप सम्बन्ध रहित स्त्रियाँ को कभी भी उपदेश न करें। (१२३)

न स्प्रष्टव्याश्च ताः क्वापि भाषणीयाश्च ता नहि ।
क्रौर्यं कार्यं न कस्मिंश्चिन्न्यासो रक्ष्यो न कस्यचित् ।।१२४।।

और इन स्त्रीयों का स्पर्श न करें तथा उन के साथ भाषण भी न करें तथा किसी भी जीव पर क्रुरता न करें और किसी की भी चीज जमानत न रखें । (१२४)

प्रतिभूत्वं न कस्यापि कार्यं च व्यावहारीके ।
भिक्षयापदतिक्रम्या न तु कार्यमृणं क्वचित् ।१२५।

और व्यवहारकार्य में किसी की भी जमानत नहीं करनी चाहिए । यदि कोई आपत्काल आ जाय तो भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह करना चाहिए, परंतु किसी का कर्ज तो कभी भी नहीं करना चाहिए । (१२५)

स्वशिष्यार्पितधान्यस्य कर्तव्यो विक्रयो न च ।
जीर्णं दत्त्वा नवीनं तु ग्राह्यं तन्नैष विक्रयः ।।१२६।

और अपने शिष्योंने जो धान्य (या अन्न) दिया हो उन को बेचना नहीं चाहिए परन्तु पुराने धान्य को देकर नया धान्य लेना यह विक्रय नहीं कहलाता (१२६)

भाद्रशुक्लचतुर्थ्यां च कार्यं विघ्नेशपूजनम् ।
इषकृष्णचतुर्दश्यां कार्याऽर्चा च हनुमतः ।।१२७।।

भाद्रपद की शुक्ला चतुर्थी के दिन गणपति की पूजा करनी चाहिए तथा अश्विन मास की कृष्णा चतुदर्शी के दिन हनुमानजी की पूजा करनी चाहिए । (१२७)

मदाश्रितानां सर्वेषां धर्मरक्षणहेतवे ।
गुरुत्वे स्थापिताभ्यां च ताभ्यां दीक्ष्या मुमुक्षवः ।।१२८।।

हमारे आश्रित सब सत्संगियों को धर्म की रक्षा के लिए-हमारे स्थापित किए हुए जो दो आचार्य हैं वे मुमुक्षु ओं को दीक्षा दें । (१२८)

यथाधिकारं संस्थाप्याः स्वे स्वे धर्मे निजाश्रिताः ।
मान्याः सन्तश्च कर्तव्यः सच्छास्त्राभ्यास आदरात् ।।१२९।।

और अपने आश्रितों को अपने अपने अधिकार के अनुसार अपने अपने धर्म में रखना चाहिए, और साधुजनों को आदर से मानना चाहिए तथा सत् शास्त्रों का अभ्यास आदर से करना चाहिए । (१२९)

मया प्रतिष्ठापितानां मन्दिरेषु महत्सु च ।
लक्ष्मीनारायणादीनां सेवा कार्या यथाविधि ।।१३०।।

तथा बडे-बडे मंदिरो में हमारे द्वारा स्थापित की हुई जो श्री लक्षामीनारायण तथा श्री नरनारायण भगवान की मुर्तियाँ हैं उनकी विधिपूर्वक सेवा करनी चीहिए । (१३०)

भगवन्मन्दिरं प्राप्तो योऽन्नार्थी कोऽपि मानवः।
आदरात्स तु सम्भाव्यो दानेनान्नस्य शक्तितः ।।१३१।।

भगवान के मंदिर में आया हुया कोई भी अन्नार्थी मनुष्य हो. उनको अपनी शक्ति अनुसार आदर से अन्नदान देकर सत्कार करना चाहिए. (१३१)

संस्थाप्य विप्रं विद्वांसं पाठशालां विधाप्य च ।
प्रवर्तनीया सद्विद्या भुवि यत्सुकृतं महत् ।।१३२।।

और पाठशाला स्थापित करके उसमें विद्वान ब्राह्मण रखकर पृथ्वी पर सद्विद्या की प्रवृत्ति करानी चाहिए क्योंकि विद्यादान महान है । (१३२)

अथैतयोस्तु भार्याभ्यामाज्ञया पत्युरात्मनः ।
कृष्ण- मन्त्रोपदेशश्च कर्तव्यः स्त्रीभ्य एव हि ।।१३३।।

उन दोनों आचार्यों की जो पत्नियाँ हैं वे अपने अपने पति की आज्ञा से स्त्रियोंको ही श्रीकृष्ण का जो मन्त्र है उसका उपदेश करें, किन्तु पुरुष को उपदेश न करें । (१३३)

स्वासन्नसम्बन्धहीना नरास्ताभ्यां तु कर्हिचित् ।
न स्प्रष्टव्या न भाष्याश्च तेभ्यो दर्श्यं मुखं न च ।।१३४।।

तथा उन दोनो की पत्नियाँ अपने समीप सम्बन्ध रहित पुरुष का स्पर्श कभी भी न करें तथा उन से बोलें भी नहीं और उनको अपना मुख भी कभी न दिखायें । (१३४)

गृहाख्याश्रमिणो ये स्युः पुरूषा मदुपाश्रिताः ।
स्वासन्नसम्बन्धहीना न स्पृश्या विधवाश्च तैः ।।१३५।।

भगवान श्री सहजानंद स्वामी गृहस्थाश्रमीयों का विशेष धर्म कहते हैं ।

हमारे आश्रित गृहस्थाश्रमी पुरुष हैं वे अपने समीप सम्बन्ध रहित स्त्रियाँ और विधवा स्त्रियों का भी स्पर्श न करें । (१३५)

मात्रा स्वस्त्रा दुहित्रा वा विजने तु वयःस्थया ।
अनापदि न तैः स्थेयं कार्यं दानं न योषितः ।१३६।

और युवा अवस्थावाली अपनी मां, बहन, तथा पुत्री के साथ भी आपत्ति के अलावा गृहस्थाश्रमी पुरुष को एकान्त में नहीं रहना चाहिए और अपनी स्त्री का दान किसी को नहीं करना चाहिए । (१३६)

प्रसङ्गो व्यवहारेण यस्याः केनापि भूपतेः ।
भवेत्तस्याः स्त्रियाः कार्यः प्रसङ्गो नैव सर्वथा।।१३७।।

जिस स्त्री को किसी भी प्रकार के व्यवहार से राजा का प्रसंग हो वैसी स्त्री का प्रसंग हमारे सत्संगि किसी भी प्रकार से न करें । १३७

अन्नाद्यैः शक्तितोऽभ्यर्च्यो ह्यतिथिस्तैर्गृहागतः ।
दैवं पैत्र्यं यथाशक्ति कर्तव्यं च यथोचितम् ।१३८।

तथा अपने घर पर आये हुए अतिथि का अपनी शक्ति अनुसार अन्नादि द्वारा सत्कार करना चाहिए और अपनी शक्ति तथा योग्यता के अनुसार देव सम्बन्धी और पितृ सम्बन्धी कार्य करना चाहिए । (१३८)

यावज्जीवं च शुश्रूषा कार्या मातुः पितुर्गुरोः ।
रोगार्तस्य मनुष्यस्य यथाशक्ति च मामकैः ।१३९।

हमारे आश्रित गृहस्थों को-माता, पिता, गुरु तथा जो रोगी मनुष्य हैं उनकी सेवा जीवन पर्यन्त अपनी शक्ति अनुसार करनी चाहिए । (१३९)

यथाशक्त्युद्यमः कार्यो निजवर्णाश्रमोचितः ।
मुष्कच्छेदो न कर्तव्यो वृषस्य कृषिवृत्तिभिः ।१४०।

हमारे आश्रित सत्संगियो को अपने वर्ण तथा आश्रम के योग्य उद्यम अपनी शक्ति अनुसार करना चाहिए और खेती करनेवाले हमारे आश्रित बैल के वृषण का उच्छेद न करें। (१४०)

यथाशक्ति यथाकालं सङ्ग्रहोऽन्नधनस्य तैः ।
यावद्व्ययं च कर्तव्यः पशुमद्भिस्तृणस्य च ।।१४१।।

तथा हमारे आश्रित सत्संगी अपने शक्ति अनुसार तथा समय के अनुकूल जितना अपने घर में खर्च हो उतना ही अन्न तथा धन का संग्रह करें और जिनके पास पशु हो ऐसे हमारे सत्संगी अपनी शक्ति अनुसार घास का भी संग्रह करें। (१४१)

गवादीनां पशूनां च तृणतोयादिभिर्यदि ।
सम्भावनं भवेत्स्वेन रक्ष्यास्ते तर्हि नान्यथा ।१४२।

और जो अपने से गौ आदि पशुओं का घास, जल आदि द्वारा पालन करना बन सके तो उनको अपने पास रखना चाहिए, यदि पालन न हो सके तो रखना नहीं चाहिए । १४२

ससाक्ष्यमन्तरा लेखं पुत्रमित्रादिनाऽपि च ।
भूवित्तदानादानाभ्यां व्यवहार्यं न कर्हिचित् ।१४३।

और साक्षी सहित लेख के बिना अपने पुत्र तथा मित्रादि के साथ भी भूमि तथा धन का लेन देन का व्यवाहार कभीं भी नहीं करना चाहिए । (१४३)

कार्ये वैवाहिके स्वस्यान्यस्य वार्प्यधनस्य तु ।
भाषाबन्धो न कर्तव्यः ससाक्ष्यं लेखमन्तरा ।।१४४।।

और अपने अथवा दुसरे के विवाह के प्रसंग में देने का धन आदि का साक्षी सहित लेख के बिना केवल बातचीत से ही व्यवहार नहीं करना चाहिए (१४४)

आयद्रव्यानुसारेण व्ययः कार्यो हि सर्वदा ।
अन्यथा तु महद्दुःखं भवेदित्यवधार्यताम् ।।१४५।।

अपनी आमदनी के धन के अनुसार ही निरंतर खर्च करना चाहिए क्योंकि जो आमदनि से ज्यादा खर्च करते हैं उन को महा दुःख होता है ऐसा समझना चाहिए । (१४५)

द्रव्यस्यायो भवेद्यावान् व्ययो वा व्यावहारिके ।
तौ संस्मृत्य स्वयं लेख्यौ स्वक्षरैः प्रतिवासरम् ।।१४६।।

व्यवहार कार्य में जितने धन की आय हो तथा जितना खर्च हो- इन दोनों को याद करके हररोज सुन्दर अक्षरों से स्वयं उनका हिसाब लिखना चाहिए । (१४६)

निजवृत्त्युद्यमप्राप्तधनधान्यादितश्च तैः ।
अर्प्यो दशांशः कृष्णाय विंशोऽशस्त्विह दुर्बलैः ।।१४७।

और वे गृहस्थाश्रमी सत्संगी अपनी वृत्ति तथा उद्यम से प्राप्त किया हुआ जो धन धान्य है इसका दशवाँ भाग निकाल कर श्रीकृष्ण भगवान को अर्पण करें और जो गरीब- दीन हो वे लोग बीसवाँ भाग अर्पण करें । (१४७)

एकादशीमुखानां च व्रतानां निजशक्तितः ।
उद्यापनं यथाशास्त्रं कर्तव्यं चिन्तितार्थदम् ।१४८।

और एकादशी आदि व्रतों का उद्यापन अपनी शक्ति के अनुसार शास्त्र विधि पूर्वक करना चाहिए क्योंकि यह उद्यापन

मनवांछित फल को देनवाला है । (१४८)

कर्तव्यं कारणीयं वा श्रावणे मासि सर्वथा ।
बिल्वपत्रादिभिः प्रीत्या श्रीमहादेवपूजनम् ।।१४९।

श्रावण मास में प्रीतिपूर्वक श्री महादेवजी का पूजन बिल्व पत्रादिक से प्रीतिपूर्वक सर्व प्रकार से स्वयं करना चाहिए अथवा करवाना चाहिए । (१४९)

स्वाचार्यान्न ऋणं ग्राह्यं श्रीकृष्णस्य च मन्दिरात्।
ताभ्यां स्वव्यवहारार्थं पात्रभूषांशुकादि च ।।१५०।

और अपने आचार्य से तथा श्रीकृष्ण भगवान के मन्दिर से कर्ज न लेना चाहिए तथा अपने व्यवहार के लिए मन्दिर से वर्तन, आभूषण और वस्त्रादि भी माँगकर नहीं लेना चाहिए । (१५०)

श्रीकृष्णगुरुसाधूनां दर्शनार्थं गतौ पथि ।
तत्स्थानेषु च न ग्राह्यं परान्नं निजपुण्यहृत् ।।१५१।

श्रीकृष्ण भगवान के तथा अपने गुरु और साधुजन के दर्शन के लिए जाते हुए मार्ग में तथा उनके स्थान में दूसरे का अन्न ग्रहण नहीं करना चाहिए (किन्तु अपने खर्च से अन्न लेना चाहिए) क्यों कि दूसरे का अन्न अपने पुण्य को नाश करने वाला है । (१५१)

प्रतिज्ञातं धनं देयं यत्स्यात्तत् कर्मकारिणे ।
न गोप्यमृणशुद्ध्यादि व्यवहार्यं न दुर्जनैः ।।१५२।।

अपना कामकाज करने के लिए बुलाये हुए मनुष्यों को जितना धन अन्न देने को कहा हो उस के इनुसार देना चाहिए परंतु उस से कम नहीं देना चाहिए । और अपनी ऋण शुद्धि को अथवा कर्ज वापिस कर दिया हो उसको गुप्त रखना नहीं चाहिए । तथा अपना वंश और कन्यादान भी छिपा नहीं रखना चाहिए और दुष्ट मनुष्यों के साथ व्यवहार नहीं करना चाहिए । (१५२)

दुष्कालस्य रिपुणां वा नृपस्योपद्रवेण वा ।
लज्जाधनप्राणनाशः प्राप्तः स्याद्यत्र सर्वथा ।।१५३।।
मूलदेशोऽपि स स्वेषां सद्य एव विचक्षणैः ।
त्याज्यो मदाश्रितैः स्थेयं गत्वा देशान्तरं सुखम् ।।१५४।।

जिस स्थान में रहते हुए दुष्काल और शत्रुओं तथा राजा के द्वारा उपद्रव हो या अपनी लज्जा, प्राण और धन का सर्व प्रकारसे नाश हो जाने का प्रसंग प्राप्त हो जाय ।

और तब अपमा मूल वतन का या गिरास का गाँव हो तो भी उस का हमारे विवेक गृहस्थ सत्संगी तत्काल त्याग कर दें और जहाँ उपद्रव न हो वैसे दुसरे देश में जा के सुख से रहें । (१५३-१५४)

आढ्यैस्तु गृहिभिः कार्या अहिंसा वैष्णवा मखाः।
तीर्थेषु पर्वसु तथा भोज्या विप्राश्च साधवः ।।१५५।।

भगवान श्री स्वामिनारायण धनिकगृहस्थ
और राजाओ के विशेष धर्म लिखते हैं ।

और धनाढ्य गृहस्थों को हिंसा रहित विष्णु याग करना चाहिए और तीर्थ स्थान में तथा द्वादशी आदि पर्व दिनों में साधु-ब्राह्मणो को भोजन देना चाहिए । (१५५)

महोत्सवा भगवतः कर्तव्या मन्दिरेषु तैः ।
देयानि पात्रविप्रेभ्यो दानानि विविधानि च ।१५६।

और धनाढ्य गृहस्थों को भगवान के मंदिरों में बडे उत्सव करना चाहिए तथा सुपात्र ब्राह्म णों को विविध प्रकार के दान देना

चाहिए ।(१५६)

मदाश्रितैर्नृपैर्धर्मशास्त्रमाश्रित्य चाखिलाः ।

प्रजाः स्वाः पुत्रवत्पाल्या धर्मः स्थाप्यो धरातले ।।१५७।।

और हमारे आश्रित सत्संगी (राजाओंने) धर्मशास्त्रके अनुसार अपने पुत्र के समान अपनी प्रजा का पालन करना चाहिए तथा पृथ्वी पर धर्म की स्थापना करनी चाहिए । (१५७)

राज्याङ्गोपायषड्वर्गा ज्ञेयास्तीर्थानि चाञ्जसा ।

व्यवहारविदः सभ्या दण्ड्यादण्ड्याश्च लक्षणैः ।।१५८।।

और उन राजाओं को राज्य के सात अंग चार उपाय तथा छ गुणों को उन के लक्षणों से अच्छी तरह जानना चाहिए तथा तीर्थ - गुप्तचर भेजने का स्थान उन को तथा व्यवहार जाननेवाले सभासदों को तथा दंड योग्य अथवा नहीं देने योग्य दो मनुष्य उन सब को लक्षणों द्वारा यथार्थ जानना चाहिए । (१५८)

सभर्तृकाभिर्नारीभिः सेव्यः स्वपतिरीशवत् ।

अन्धो रोगी दरिद्रो वा षण्ढो वाच्यं न दुर्वचः ।।१५९।।

भगवान श्री सहजानंद स्वामी सौभाग्यवती स्त्रियों का और विधवाओं का विशेष धर्म कहते हैं ।

हमारे आश्रित सौभाग्यवती स्त्रियों को अपना पति अंध, रोगी, दरिद्र अथवा नपुंमसक हो तो भी उस की सेवा ईश्वर के समान ही करनी चाहिए और पति को कभी कटु वचन कहना नहीं चाहिए । (१५९)

रूपयौवनयुक्तस्य गुणिनोऽन्यनरस्य तु ।

प्रसङ्गो नैव कर्तव्यस्ताभिः साहजिकोऽपि च ।।१६०।।

वे सौभाग्यवती स्त्रियोंने रुप तथा यौवन युक्त और गुणवान ऐसे दूसरे किसी भी पुरुष का प्रसंग, सहज स्वभाव से भी करना नहीं । (१६०)

नरेक्ष्यनाभ्यूरुकुचाऽनुत्तरीया च नो भवेत् ।

साध्वी स्त्री न च भण्डेक्षा न निर्लज्जादिसङ्गिनी।।१६१।।

और पतिव्रता सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपनी नाभी, जंघा और छाती को दूसरे पुरुष देखें ऐसा बर्ताव न करें और ओढने के वस्त्र बिना खुल्ले शरीर से न रहें तथा भांड-भाडैती देखने न जायँ औत निर्लज्ज आदि स्त्रियों की संगत न करें । (१६१)

भूषासदंशुकधृतिः परगेहोपवेशनम् ।

त्याज्यं हास्यादि च स्त्रीभिः पत्यौ देशान्तरं गते ।।१६२।।

और अपने पति के परदेश जाने पर सौभाग्यवती स्त्रियों को आभूषण तथा उत्तम वस्त्र को धारण करना नहींचाहिए । तथा किसी के साथ हँसी मजाक नहीं करना चाहिए । (१६२)

विधवाभिस्तु योषाभिः सेव्यः पतिधिया हरिः ।

आज्ञायां पितृपुत्रादेर्वृत्यं स्वातन्त्र्यतो न तु ।१६३।

विधवा स्त्रीओं के विशेष धर्म ।

हमारे आश्रित विधवा स्त्रीयों को (पतिबुद्धिसे) भगवान की पतिरुपसे सेवा करनी चाहिए और अपने पिता तथा पुत्र आदि की आज्ञामें रहना चाहिए किन्तुस्वतं त्रता से बर्ताव करना नहीं चाहिए । (१६३)

स्वासन्नसम्बन्धहीना नराः स्पृश्या न कर्हिचित् ।

तरुणैस्तैश्च तारुण्ये भाष्यं नावश्यकं विना ।।१६४।।

और अपने समीप सम्बन्ध रहित पुरुषों का स्पर्श कभी भी नहीं करना चाहिए तथा अपनी युवावस्था में आवश्यक कार्य बिना समीप सम्बन्ध रहित तरुण पुरुषों से भाषण भी नहीं करना चाहिए । (१६४)

स्तनन्धयस्य नुः स्पर्शे न दोषोऽस्ति पशोरिव ।

आवश्यके च वृद्धस्य स्पर्शे तेन च भाषणे ।।१६५।।

परन्तु स्तनपान करनेवाले बालक के स्पर्श में, पशु के स्पर्श समान ही, दोष नहीं है यदि कोई आवश्यक कार्य उपस्थित हो तब उस में किसी वृद्ध पुरुष के स्पर्श में और उसके साथ भाषण करने में दोष नहीं है । (१६५)

विद्याऽनासन्नसम्बन्धात्ताभिः पाठ्या न काऽपिनुः

व्रतोपवासैः कर्तव्यो मुहुर्देहदमस्तथा ।।१६६।।

उन विधवा स्त्रियों को अपने समीप सम्बन्ध रहित पुरुष से कोई भी विद्या पढनी नहीं चाहिए और बार बार व्रतउपवास करके अपने शरीर का दमन करना चाहिए । (१६६)

धनं च धर्मकार्येऽपि स्वनिर्वाहोपयोगि यत् ।

देयं ताभिर्न तत् क्वापि देयं चेदधिकं तदा ।।१६७।।

और आपने पास जो धन है वह यदि अपने निर्वाह के लिए पर्याप्त है । तो उस धन को धर्मकार्य में भी देना नहीं चाहिए परन्तु अपने निर्वाह से अधिक हो तो धर्मकार्य में देना चाहिए ।(१६७)

कार्यश्च सकृदाहारस्ताभिः स्वापस्तु भूतले ।

मैथुनासक्तयोर्वीक्षा क्वापि कार्या न देहिनोः ।।६८।।

उन विधवा स्त्रियों को सिर्फ एक बार आहार करना चाहिए तथा भूमि पर सोना चाहिए और मैथुन से आसक्त जीव प्राणी मात्र को देखना नहीं चाहिए । (१६८)

वेषो न धार्यस्ताभिश्च सुवासिन्यां स्त्रियास्तथा।

न्यासिन्या वीतरागाया विकृतश्च न कर्हिचित्।।

और विधवा स्त्रियों को सौभाग्यवती स्त्रियोंके समान वेशभूषाधारण करनी नहीं चाहिए तथा सन्यासिनी और वैरागिनी जैसी वेशभूषा भी धारण करनी नहीं चाहिए । संक्षेपमें अपने देश, कूल तथा आचार के विरुद्ध वेशभूषा कभी भी धारण नहीं करनी चाहिए । (१६९)

सङ्गो न गर्भपातिन्याः स्पर्शः कार्यश्च योषितः।

शृङ्गारवार्ता न नृणां कार्याः श्रव्या न वै क्वचित्।।१७०।।

उन्हें गर्भपात करानेवाली स्त्रीका संग और स्पर्श भी नहीं करना चाहिए और पुरुष की शृंगार रसयुक्त बातें कभी भी नहीं करनी चाहिए और कभी सुननी भी नहीं चाहिए । (१७०)

निजसम्बान्धिभिरपि तारुण्ये तरुणैर्नरैः ।

साकं रहसि न स्थेयं ताभिरापदमन्तरा ।।१७१।।

और युवान अवस्थावाली विधवा स्त्रियों को युवान अवस्था में रहे हुए अपने सम्बन्धी पुरुष के साध भी एकान्त स्थल में बिना आपत्काल नहीं करना चाहिए । (१७१)

न होलाखेलनं कार्यं न भूषादेश्च धारणम् ।

न धातुसूत्रयुक्सूक्ष्मवस्त्रादेरपि कर्हिचित् ।१७२।।

और होली खेलना तथा आभूषण आदि को धारण करना

नहीं चाहिए और सुवर्ण आदि जरीवाले वस्त्र कभी भी धारण करना नहीं चाहिए। (१७२)

सधवाविधवाभिश्च न स्नातव्यं निरम्बरम् ।
स्वरजोदर्शनं स्त्रीभिर्गोपनीयं न सर्वथा ।।१७३।।

सौभाग्यवती तथा विधवा स्त्रियां वस्त्र धारण किये बिना स्नान न करें और अपना रजस्वला धर्म किसी भी प्रकार गुप्त नहीं रखना चाहिए।

मनुष्यं चांशुकादीनि नारी क्वापि रजस्वला ।
दिनत्रयं स्पृशेन्नैव स्नात्वा तुर्येऽह्नि सा स्पृशेत्।।१७४।।

रजों धर्म वाली सधवा और विधवा स्त्रियाँ तीन दिन तक कोई मनुष्य अथवा वस्त्रादिक को स्पर्श न करें परन्तु चौथे दिन स्नान करके ही स्पर्श करें। (१७४)

नैष्ठिकव्रतवन्तो ये वर्णिनो मदुपाश्रयाः।
तैः स्पृश्या न स्त्रियो भाष्या न च वीक्ष्याश्च ता धिया ।१७५।

भगवान श्री स्वामिनारायण नैष्ठिक ब्रह्मचारिओं का विशेष धर्म कहते हैं।

हमारे आश्रित नैष्ठिक ब्रह्मचारी स्त्री मात्र का स्पर्श न करें तथा स्त्रीयों के साथ भाषण न करें तथा जान बूझकर स्त्रीयों को देखें भी नहीं (१७५)

तासां वार्ता न कर्तव्या न श्रव्याश्च कदाचन ।
तत्पादचारस्थानेषु न च स्नानादिकाः क्रियाः।१७६

नैष्ठिक ब्रह्मचारी स्त्रीकी बात न करें तथा न सुनें और जिस स्थान में स्त्रियां आती जाती हों वहां स्नानादि क्रिया करने के लिए न जायँ (१७६)

देवताप्रतिमां हित्वा लेख्या काष्ठादिजापि वा ।
न योषित्प्रतिमा स्पृश्या न वीक्ष्या बुद्धिपूर्वकम् ।।१७७।।

और देवताकी प्रतिमा सिवा अन्य स्त्रीकी प्रतिमा या चित्र तथा काष्ठ आदि की बनाई हुइ प्रतिमा या चित्र को स्पर्श न करें और जान बूझकर उस को देखें भी नहीं । (१७७)

न स्त्रीप्रतिकृतिः कार्या न स्पृष्यं योषितोंऽशुकम्।
न वीक्ष्यं मैथुनपरं प्राणिमात्रं च तैर्धिया ।।१७८।।

नैष्ठिक ब्रह्मचारियों कों स्त्रीकी प्रतिमा बनाना नहीं तथा स्त्री के वस्त्र को स्पर्श करना नहीं और मैथुन क्रीडा में आसक्त प्राणीमात्र को जान बूज़कर देखना भी नहीं। (१७८)

न स्पृश्यो नेक्षणीयश्च नारीवेषधरः पुमान् ।
न कार्यं स्त्रीः समुदिश्य भगवद्गुणकीर्त्तनम् ।।१७९।।

और स्त्री के वेष में रहे हुए पुरुष का स्पर्श नहीं करना और उसको देखना भी नहीं और स्त्रियों कों सुनाने के लिए भगवान की कथा वार्ता कीर्तन भी करना नहीं।(१७९)

ब्रह्मचर्यव्रतत्यागपरं वाक्यं गुरोरपि ।
तैर्न मान्यं सदा स्थेयं धीरैस्तुष्टैरमानिभिः ।।१८०।।

जिस वचन को मानने से अपने ब्रह्मचर्य व्रतका त्याग हो जाय ऐसा वचन गुरु का हो तो भी ब्रह्मचारी लोंगो कों मानना नहीं और हमेशा धैर्यपूर्वक तथा संतोषपूर्वक और मान रहित रहें। (१८०)

स्वातिनैकट्यमायान्ती प्रसभं वनिता तु या ।
नीवारणीया साभाष्य तिरस्कृत्यापि वा द्रुतम् ।।१८१।।

कोई भी स्त्री बलपूर्वक अतिशय अपने पास आती हो तो उसको बोलकर अथवा तिरस्कार करके भी तुरन्तलौटा देना चाहिए परन्तु समीप में आने देना नहीं चाहिए । (१८१)

प्राणापद्युपपन्नायां स्त्रीणां स्वेषां च वा क्वचित्।।१८२।।
तदा स्पृष्ट्वापि तद्रक्षा कार्या संभाष्य ताश्च वा

और कभी स्त्रियों अथवा अपने प्राण जाने की आपत्ति आ जाय तब तो स्त्रियों को छूकर अथवा उनसे बोलकर भी उनकी रक्षा करनी चाहिए और अपनी भी रक्षा करनी चाहिए(१८२)

तैलाभ्यङ्गो न कर्तव्यो न धार्यं चायुधं तथा ।
वेषो न विकृतो धार्यो जेतव्या रसना च तैः।।१८३।।

नैष्ठिक ब्रह्मचारियों को अपने शरीर पर तेल लगाना नहीं आयुध धारण करना नहींवेशभूषा धारण करना नहीं और रसना ईन्द्रिय को जीतना । (१८३)

परिवेषणकर्त्री स्याद्यत्र स्त्री विप्रवेश्मनि ।
न गम्यं तत्र भिक्षार्थं गन्तव्यमितरत्र तु ।।१८४।।

जिस ब्राह्मण के घर में स्त्री परोसनेवाली हो उस घरमें भिक्षा के लिए जाना नहीं परन्तु जहां पुरुष परोसनेवाला हो वहां जाना । (१८४)

अभ्यासो वेदशास्त्राणां कार्यश्च गुरुसेवनम् ।
वर्ज्यः स्त्रीणामिव स्त्रैणपुंसां सङ्गश्च तैः सदा।।१८५।।

नैष्ठिक ब्रह्मचारियों को वेदशास्त्र को अभ्यास करना और गुरु की सेवा करना और स्त्री के समान ही और स्त्री में आसक्त पुरुष के संग का भी सदा ही त्याग करना । (१८५)

चर्मवारि न वै पेयं जात्या विप्रेण केनचित् ।
पलाण्डुलशुनाद्यं च तेन भक्ष्यं न सर्वथा ।।१८६।।

जाति से जो ब्रह्मण हैं वे लोग कोई भी चर्म में रखा जल न पीयें तथा प्याज, लसून आदि का भक्षण किसी भी प्रकार न करें ।(१८६)

स्नानं संध्यां च गायत्रीजपं श्रीविष्णुपूजनम् ।
अकृत्वा वैश्वदेवं च कर्तव्यं नैव भोजनम् ।।१८७।।

तथा जो ब्राह्मण हैं उनको स्नान, संध्या वंदन, गायत्री मंत्र का जाप भगवान की पूजा (या विष्णु पूजा) तथा वैश्वदेवकी पूजा इतने नियम किये बिना भोजन करना नहीं चाहिए ।

साधवो येऽथ तैः सर्वैर्नैष्ठिकब्रह्मचारिवत् ।
स्त्रीस्त्रैणसङ्गादि वर्ज्यं जेतव्याश्चान्तरारयः ।१८८

भगवान श्री स्वामिनारायण अपने संतो के विशेष धर्म का निरुपण करते हैं ।

हमारे आश्रित साधुलोग भी नैष्ठिक ब्रह्मचारियों के समान ही स्त्री और स्त्री में आसक्त पुरुष के प्रसंग आदि का त्याग करें और अंतः शत्रु, काम, क्रोध, लोभ, मान आदि जो हैं उनको जीतें । (१८८)

सर्वेन्द्रियाणि जेयानि रसना तु विशेषतः।
न द्रव्यसङ्ग्रहः कार्यः कारणीयो न केनचित् ।१८९

तथा सर्व इन्द्रियों को जीतना चाहिए परन्तु रसना इन्द्रिय को विशेष करके जीतना चाहिए तथा साधुलोग धन का संग्तह न करें और अपने लिए अन्य के पास भी संग्रह नहीं करवाना। न्यासो रक्ष्यो न कस्यापि धैर्यं त्याज्यं न कर्हिचित्।

न प्रवेशयितव्या च स्वावासे स्त्री कदाचन ।१९०।

और किसी की अमानत रखनी नहीं कभी भी धैर्य का त्याग करना नहीं और अपने निवास स्थान में कभी भी स्त्री का प्रवेश होने नहीं देना । (१९०)

न च सङ्घं विना रात्रौ चलितव्यमनापदि ।
एकाकिभिर्न गन्तव्यं तथा क्वापि विनापदम्।१९१।

साधु लोको बिना आपत्ति, संघ के अलावा रात्रि में चलना नहीं, और आपत्ति विना कभी भी अकेला चलना नहीं । (१९१)

अनर्घ्यं चित्रितं वासः कुसुम्भाद्यैश्च रञ्जितम् ।
न धार्यं च महावस्त्रं प्राप्तमन्येच्छयापि तत् ।१९२।

जो वस्त्र हबुत कीमती हो तथा चित्रविचित्र रंगवीला हो तथा कुसुम्भादि रंग से रंगाहुआ हो तथा शाल-दुशाला हो, ऐसा वस्त्र दूसरे की इच्छा से प्राप्त हुआ हो तो भी साधु लोगों को धारण करना नहीं चाहिए । (१९२)

भिक्षां सभां विना नैव गन्तव्यं गृहिणो गृहम् ।
व्यर्थः कालो न नेतव्यो भक्तिं भगवतो विना।१९३।

और भिक्षा तथा सभा के प्रसंग बिना गृहस्थ के घर पर नहीं जाना और भगवान की नवधा भक्ति बिना व्यर्थ काल बिताना नहीं (१९३)

पुमानेव भवेद्यत्र पक्वान्नपरिवेषणः ।
ईक्षणादि भवेन्नैव यत्र स्त्रीणां च सर्वथा ।।१९४।।
तत्र गृहिगृहे भोक्तुं गन्तव्यं साधुभिर्मम ।
अन्यथामान्नमर्थित्वा पाकः कार्यः स्वयं च तैः।।

जिस गृहस्थ के घर में पकाया हुआ अन्न का परोसनेवाला पुरुष हो और सर्व प्रकार से जहां स्त्री का दर्शनादि प्रसंग न हो उस गृहस्थ के घर में साधु लोगों को भोजन के लिये जाना उचित है परन्तु ऐसा प्रबन्ध जहां न हो तो कच्चे अन्न मँागकर अपने हाथ से पकाना उचित है ।और भगवान को अर्पण करके खाना चाहिए। (१९४-१९५)

आर्षभो भरतः पूर्वं जडविप्रो यथा भुवि ।
अवर्तातात्र परमहंसैर्वृत्त्यं तथैव तैः ।।१९६।।

प्रचीन समय में जैसे ऋषभदेव के पुत्र भरतजी जड विप्र बर्ताव करते थे ऐसा बर्ताव परमहंस वृत्तिवाले हमारे साधुलोगों को करना (१९६)

वर्णिभिः साधुभिश्चैतैर्वर्जनीयं प्रयत्नतः ।
ताम्बुलस्याहिफेनस्य तमालादेश्च भक्षणम् ।१९७।

(साधु-ब्रह्मचारी दोनों के मिश्र धर्म) नैष्ठिक ब्रह्मचारी और साधुजन-ताम्बूल, तंबाखू, अफीन आदि के भक्षण का प्रयत्नपूर्वक त्याग करें (१९७)

संस्कारेषु न भोक्तव्यं गर्भाधानमुखेषु तैः ।
प्रेतश्राद्धेषु सर्वेषु श्राद्धे च द्वादशाहिके ।।१९८।।

वे नैष्ठिक ब्रह्मचारी तथा साधुजनों गर्भाधान आदि संस्कार

तथा एकादशाह पर्यन्त सभी प्रेतश्राद्ध में और द्वादशाह श्राद्ध में भोजन न करें । (१९८)

दिवास्वापो न कर्तव्यो रोगाद्यापदमन्तरा ।
ग्राम्यवार्ता न कार्या च न श्रव्या बुद्धिपूर्वकम् ।१९९

और रोगादि आपत्ति के बिना दिन में सोना नहीं और ग्राम्यवार्ता करनी तथा सुननी भी नहीं । (१९९)

स्वप्यं न तैश्च खट्वायां विना रोगादिमापदम् ।
निश्छद्म वर्तितव्यं च साधूनामग्रतः सदा ।२००।

रोगादि आपत्ति काल आये बिना खाट पर सोना नहीं । और साधुपुरुषों के साथ निष्कपट भाव से बर्ताव करना । (२००)

गालिदानं ताडनं च कृतं कुमतिभिर्जनैः ।
क्षन्तव्यमेव सर्वेषां चिन्तनीयं हितं च तैः ।।२०१।।

और यदि कोई कुमतिवाले दुष्ट जन अपने को गाली दें अथवा मारें तो भी साधुजन और ब्रह्मचारियों को सहन करना और उनके कल्याण का चिन्तवन करना । (२०१)

दूतकर्म न कर्तव्यं पैशुनं चारकर्म च ।
देहेऽहन्ता च ममता न कार्या स्वजनादिषु ।२०२।

साधु जनों को किसी का दूतकर्म नहीं करना चूगली नहीं करनी, तथा देह में अहंबुद्धि नहीं करनी तथा स्वजनादि में ममता भाव रखना नहीं । (२०२)

इति सङ्क्षेपतो धर्माः सर्वेषां लिखिता मया ।
साम्प्रदायिकग्रन्थेभ्यो ज्ञेय एषां तु विस्तरः ।२०३।

हमारे आश्रित स्त्री- पुरुष आदि सब जनों के सामान्य धर्म तथा विशेष धर्म संक्षेप में लिखे हैं इन धर्मों का विस्तार तो हमारे साम्प्रदायिक ग्रंथो में से जान लेना । (२०३)

सच्छास्त्राणां समुद्धृत्य सर्वेषां सारमात्मना ।
पत्रीयं लिखिता नृणामभीष्टफलदायिनी ।।२०४।।

हमने सभी सत् शास्त्रों के सार स्वरुप यह शिक्षापत्री लिखी है जो मनुष्यों को मनोवांछित फल देने वाली है । (२०४)

इमामेव ततो नित्यमनुसृत्य ममाश्रितैः ।
यतात्मभिर्वर्तितव्यं न तु स्वैरं कदाचन ।।२०५।।

इस लिए हमारे सभी आश्रितगण सावधानी से प्रतिदिन इन शिक्षापत्री का अनुसरण करके बर्ताव करें कभी भी अपनी इच्छानुसार बर्ताव करना नहीं । (२०५)

वर्तिष्यन्ते य इत्थं हि पुरुषा योषितस्तथा ।
ते धर्मादिचतुर्वर्गसिद्धिं प्राप्स्यन्ति निश्चितम् ।२०६

हमारे आश्रित जो पुरुष तथा स्त्रियाँ इस शिक्षापत्री के अनुसार बर्ताव करेंगे वे लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थो को अवश्य प्राप्त करेंगे । (२०६)

नेत्थं य आचरिष्यन्ति ते त्वस्मत्सम्प्रदायतः ।
बहिर्भूता इति ज्ञेयं स्त्रीपुंसैः साम्प्रदायिकैः ।२०७।

और जो लोग इस शिक्षापत्री के अनुसार बर्ताव नहीं करते बैं वे लोग हमारे सम्प्रदाय से बाहर हौं ऐसा हमारे संप्ररदाय के स्त्री-पुरुष समजें । (२०७)

शिक्षापत्र्याः प्रतिदिनं पाठोऽस्या मदुपाश्रितैः ।
कर्तव्योऽनक्षरज्ञैस्तु श्रवणं कार्यमादरात् ।।२०८।।

हमारे आश्रित सत्संगी इस शिक्षापत्री का पाठ करें और जिनको पढना नहीं आता हो वे आदर से शिक्षापत्री का श्रवण करें । (२०८)

वक्त्रभावे तु पूजैव कार्याऽस्याः प्रतिवासरम् ।
मद्रूपमिति मद्वाणी मान्येयं परमादरात् ।।२०९।।

हमारे आश्रित सत्संगी इस शिक्षापत्री का प्रतिदिन पाठ करें, अगर श्रवण करानेवाला न मिले तो सिर्फ पूजा करें यह शिक्षापत्री हमारी वाणी है और हमारा स्वरुप है ऐसा समझकर परम आदर से मानें । (२०९)

युक्ताय सम्पदा दैव्या दातव्येयं तु पत्रिका ।
आसुर्या सम्पदाढ्याय पुंसे देया न कर्हिचित्।२१०।

यह शिक्षापत्री जो मनुष्य दैमी संपत्ति से युक्त हो उन्हें देना परन्तु जो आसुरी संपत्ति से युक्त हों उनको तो कभी भी न दें । (२१०)

विक्रमार्कशकस्याब्दे नेत्राष्टवसुभूमिते ।
वसन्ताद्यदिने शिक्षापत्रीयं लिखिता शुभा ।२११।

वित्तम संवत १८८२ माघ शुक्ल पञ्चमी के दिन यह शिक्षापत्री हमने लिखि है जो परम कल्याण करने वाली है । (२११)

निजाश्रितानां सकलार्तिहन्ता सधर्मभक्तेरवनं विधाता ।
दाता सुखानां मनसेप्सितानां तनोतु कृष्णोऽखिलमङ्गलं नः ।।२१२।।

इति श्रीसहजानन्दस्वामिलिखिता शिक्षापत्री समाप्ता

जो भगवान अपने आश्रित भक्तजनों के समग्र कष्ट नाश करनेवाले हैं तथा धर्म सहित भक्ति की रक्षा करनेवाले हैं और अपने भक्तजनों को मनोवांछित फल देनेवाले हैं वे श्रीकृष्ण भगवान हमारे समग्र मंगल कार्यों में बढाबा दें (मंगल कार्यों का विस्तार करें) ।।२१२।।

इति श्री शिक्षापत्री की हिंदी टीका समाप्त ।

इति श्री सहजानंदस्वामिलिखिता शिक्षापत्रीका भावानुवाद समाप्तः।